अमर उजाला

प्रवाह

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

नई दिल्ली ■ बुधवार, 2 जून 2021

ज्ञान के माध्यम से हमें शक्ति मिलती है। प्रेम के जरिये हमें परिपूर्णता मिलती है।
-डॉ राधाकृष्णन

पिछले साल जीडीपी में 7.3 फीसदी की गिरावट महामारी और लॉकडाउन के लंबे दौर को देखते हुए अप्रत्याशित नहीं है। बेशक स्थिति पहले से सुधरी जरूर है, लेकिन सीएमआईई के आंकड़े बता रहे हैं कि मई के महीने में एक करोड़ नौकरियां चली गईं।

महामारी और अर्थव्यवस्था

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) द्वारा पिछले साल के लिए जारी अर्थव्यवस्था के आंकड़े महामारी और लॉकडाउन के लंबे दौर को देखते हुए अप्रत्याशित नहीं हैं, जिनके मुताबिक जीडीपी में 7.3 फीसदी की गिरावट दर्ज की गई, जोकि चार दशक में सबसे न्यूनतम है। अलबत्ता फरवरी में जारी किए गए उसके आठ फीसदी गिरावट के अनुमान से इसे कुछ बेहतर कहा जा सकता है। जीडीपी में यह मामूली-सा सुधार 2020-21 की चौथी तिमाही (जनवरी-मार्च) में दर्ज की गई 1.6 फीसदी की सकारात्मक वृद्धि का नतीजा है। वास्तव में अपने देश में पिछले साल कोरोना वायरस का संक्रमण फैलने से पहले 2019-20 की अंतिम तिमाही में विकास दर महज तीन फीसदी दर्ज की गई थी। कोरोना का संक्रमण बढ़ने के साथ ही देश में राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन लगाया गया, जिससे अपरिहार्य सेवाओं को छोड़कर तकरीबन सारी आर्थिक गतिविधियां ठप हो गई थीं। सड़क, रेल और हवाई यातायात के साथ ही औद्योगिक इकाइयां तथा बाजारों के बंद हो जाने का अर्थव्यवस्था पर जबर्दस्त प्रभाव पड़ा, नतीजतन अप्रैल से जून के बीच पहली तिमाही में 24.5 फीसदी की गिरावट के साथ जीडीपी रसातल में चली गई। उस दौर में देश ने प्रवासी मजदूरों की घर वापसी के रूप में रिवर्स पलायन के अभूतपूर्व संकट का भी सामना किया। निश्चय ही 2020 के आखिर में आर्थिक गतिविधियों के तेज होने और इस साल फरवरी में संक्रमण के नए मामलों में गिरावट तथा टीकाकरण शुरू होने के बाद स्थिति कुछ सुधरी, मगर मार्च में कोरोना की दूसरी लहर ने नई चुनौती पेश कर दी। इस बार चूंकि संक्रमण गांवों में फैल चुका है, जिससे कृषि क्षेत्र पर असर पड़ सकता है, जबकि पिछले साल इसका प्रदर्शन दूसरे क्षेत्रों से काफी बेहतर था। सरकार के मुख्य आर्थिक सलाहकार के वी सुब्रमण्यन का कहना है कि दूसरी लहर का देश की अर्थव्यवस्था पर व्यापक असर नहीं पड़ेगा। मगर सीएमआईई के मुताबिक, मई के महीने

में एक करोड़ लोगों का रोजगार या नौकरियां छिन गई हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह तो यही है कि अब भी विनिर्माण, कंस्ट्रक्शन और सेवा क्षेत्र की गतिविधियां ठप-सी हैं। दूसरी ओर रेटिंग एजेंसियों के मुताबिक, इस साल विकास दर दस फीसदी तक रह सकती है, मगर यह विरोधाभास तभी खत्म हो सकता है, जब आर्थिक गतिविधियां तेज हों और यह टीकाकरण अभियान में तेजी लाकर ही संभव होगा।

प्रतिस्पर्धा नहीं, समन्वय हो

भारत को एकतरफा केंद्रीकरण या विकेंद्रीकरण करने के बजाय राष्ट्रीय नीति ढांचे के भीतर स्थानीय नवाचार और अनुकूलन के लिए जगह के साथ केंद्र-राज्य समन्वय की आवश्यकता है। यह औपचारिक अंतर-सरकारी संस्थानों जैसे अंतर-राज्य परिषद, नीति आयोग के जरिये हो सकता है।

संघवाद, सरकार के अपने विभिन्न चरणों और सत्ता के जटिल वितरण के साथ संकटों के समय कई बार अंतर्निहित कारणों से निर्णय लेने की प्रक्रिया के उपयुक्त नहीं लगता। वित्तीय संकटों, विश्व युद्धों और महामारियों का इस्तेमाल अक्सर संघवाद के अप्रचलित होने की घोषणा करने के लिए किया गया है। इस तरह के संकट समन्वय की समस्या उत्पन्न करते हैं, जो कि कई सांविधानिक योजनाओं में प्रत्याशित नहीं थे और आपातकालीन शक्तियों के उपयोग को वैध बना सकते हैं, जो कि पहले से मौजूद सत्ता के वितरण को कुचल सकते हैं। जैसा कि हेरॉल्ड लास्की ने 1930 के दशक में अमेरिका के बारे में लिखा था, 'संघवाद का युग समाप्त हो गया है...केवल एक केंद्रीकृत प्रणाली ही नए समय की समस्याओं का प्रभावी ढंग से सामना कर सकती है।' या जैसा कि हाल ही में रोजेल और विलकॉक्स ने कहा, संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए व्यापक स्तर के राष्ट्रीय समन्वय और अंतरसरकारी सहयोग की आवश्यकता होती है। केंद्र-राज्य संबंधों के नजरिये से देखें, तो भारत में कोविड-19 महामारी ने दो भूमिकाएं निभाईं। दोनों भूमिकाओं ने- अपनी केंद्रीकरण और विकेंद्रीकरण प्रवृत्तियों में- केंद्र-राज्य संबंधों के बुनियादी ढांचे में महत्वपूर्ण कमजोरियों को उजागर किया है, जो कि भारतीय शासन की चुनौतियों के केंद्र में हैं। कोविड-19 महामारी के खिलाफ भारत की प्रारंभिक प्रतिक्रिया अत्यधिक केंद्रीकृत थी, एक हद तक अतिनिर्धारित। दरअसल 2019 के चुनावों के बाद नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली भाजपा ने संघवाद के अपने केंद्रीकृत 'एक राष्ट्र' वाले दृष्टिकोण को सघन किया, क्योंकि वह अपना राजनीतिक प्रभुत्व मजबूत करना चाहती है। प्रधानमंत्री मोदी ने महामारी की शुरुआत में रातोंरात दुनिया का सबसे सख्त लॉकडाउन लगा दिया। उन्होंने राज्य सरकारों पर जिम्मेदारी छोड़ने के बजाय कोरोना वायरस के खिलाफ केंद्र की त्वरित और निर्णायक कार्रवाई का श्रेय लेना चाहा।

लुइस टिलिन
किंग्स कॉलेज, लंदन में रीडर

भारत की भारी केंद्रीकृत प्रतिक्रिया की कई लोगों ने आलोचना की, क्योंकि

देश के विभिन्न राज्यों में संक्रमण की दर और स्वास्थ्य प्रणाली की क्षमता में अंतर होने के बावजूद सभी राज्यों के साथ एक ही तरह का रवैया अपनाया गया था। इसके अलावा, सख्त लॉकडाउन के चलते खासकर भारत के विशाल असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए पैदा हुई सामाजिक व आर्थिक कठिनाइयों का जवाब देने की केंद्र एवं राज्यों की क्षमता का गंभीर परीक्षण भी हुआ।

पिछली यूपीए सरकार के तहत, राज्य विशिष्ट उप-राष्ट्रीय कल्याणकारी व्यवस्थाओं का निर्माण करने में सक्षम थे। लेकिन कोविड से पहले शुरू हो गई केंद्रीकरण की प्रवृत्तियों ने राज्यों की राजकोषीय और नीतिगत स्वायत्तता को कमजोर कर दिया। *डेकोवइंडियाः डिसेंट्रलाइजेशन ऐंड कोविड-19* नामक एक परियोजना के हिस्से के रूप में सहयोगात्मक अनुसंधान ने राज्य सरकारों द्वारा अपनाए गए सामाजिक सुरक्षा उपायों में भिन्नता को वर्गीकृत करने की कोशिश की है। राज्य सरकारें घोषणा करना चाहती थीं कि वे निर्णायक रूप से कार्य कर रही हैं, लेकिन कई मामलों में ऐसा करने की उनकी क्षमता सीमित थी। फिर भी, सार्वजनिक स्वास्थ्य रणनीतियों के अनुरूप समर्थन को प्रभावी ढंग से और तेजी से लक्षित करने के लिए स्थानीय संदर्भों की अनुकूलता महत्वपूर्ण थी, जैसा कि केरल के मामले में दिखाया गया है। यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है, राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन के बाद राज्य की सीमाओं के पार प्रवासी श्रमिकों के अचानक और बड़े पैमाने पर हुई घर वापसी ने भारत की संघीय प्रणाली में असंगठित श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा के समन्वय के लिए एक प्रभावी अंतर-सरकारी ढांचे की कमी का खुलासा किया।

भारत में कोविड-19 की दूसरी लहर के दौरान, जो पहली लहर के मुकाबले गंभीर है, केंद्र की प्रतिक्रिया में एक उल्लेखनीय बदलाव देखा गया, जिसमें प्रमुख क्षेत्रों, जैसे वैक्सीन की खरीद और वितरण का विकेंद्रीकरण कर दिया गया है। दूसरी लहर में, केंद्र की प्रतिक्रिया उसी तरह दिखती है, जैसे ब्राजील या अमेरिका की प्रतिक्रिया पहली लहर के दौरान थी। दूसरी लहर में राष्ट्रव्यापी लॉकडाउन तो नहीं लगाया गया, लेकिन स्थानीय स्तर पर लॉकडाउन और कर्फ्यू की श्रृंखला चलाई गई। केंद्र पर निष्क्रिय रहने का आरोप लगाया गया है। सामूहिक समारोहों को कम करने के प्रति सुस्ती बरती गई, जिससे दूसरी लहर में स्थिति गंभीर बनी। इसने ऑक्सीजन आपूर्ति के अंतर-राज्यीय वितरण की निगरानी को प्रभावी ढंग से अदालतों और सोशल मीडिया के माध्यम से जुटे नागरिक कार्यकर्ताओं को सौंप दिया। वैक्सीन की कमी के लिए कई राज्य सरकारों की आलोचना के बाद, केंद्र ने राज्यों को 45 साल से कम उम्र के लोगों के लिए वैक्सीन की खरीद और वितरण की जिम्मेदारी सौंप दी। दूसरी लहर ने केंद्र को राज्यों पर कुप्रबंधन का दोष मढ़ते और अंतर-सरकारी संबंधों के लिए पहले से ही अति-पक्षपातपूर्ण संदर्भ में केंद्र-राज्य संघर्ष को तेज करते हुए दर्शाया है।

वैक्सीन की खरीद को विकेंद्रीकृत करने और वैक्सीन की बिक्री को उदार बनाने के निर्णय के साथ-साथ राज्यों में ऑक्सीजन आपूर्ति के उत्पादन और वितरण के समन्वय के लिए एक बुनियादी ढांचे के निर्माण में विफलता ने राज्यों को सबके लिए खुला छोड़ने का जोखिम पैदा किया, जिसमें केंद्र अंपायर नहीं था, बल्कि एक अन्य खिलाड़ी था।

कोविड-19 में यूरोपीय संघों में निर्णय लेने के संघीय दृष्टिकोण को वर्गीकृत करने के लिए हेगेले और श्नाबेल द्वारा विकसित एक टाइपोलॉजी का उपयोग करते हुए हम कह सकते हैं कि भारत पहली लहर में एकतरफा केंद्रीकृत निर्णय लेने की ओर बढ़ा, जबकि दूसरी लहर में लगभग एकतरफा विकेंद्रीकृत निर्णय लेने की तरफ बढ़ा।

भारत को एकतरफा केंद्रीकरण या विकेंद्रीकरण करने के बजाय राष्ट्रीय नीति ढांचे के भीतर स्थानीय नवाचार और अनुकूलन के लिए जगह के साथ केंद्र-राज्य समन्वय की आवश्यकता है। समन्वय में, कम से कम, केंद्र और राज्यों के बीच और/या राज्यों के बीच संचार, सूचना साझाकरण और चर्चा शामिल होगी। यह औपचारिक अंतर-सरकारी संस्थानों जैसे भारत की मरणासन्न अंतर-राज्य परिषद, नीति आयोग, या अधिक अनौपचारिक तंत्र के माध्यम से हो सकता है।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी
(1894-1971)

मुखड़ा क्या देखे दर्पण में

नदी का स्रोत चाहे पर्वत पर बहे, चाहे समतल भूमि पर, उसकी धारा विच्छिन्न नहीं होती। साहित्य का स्रोत भी भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण करके अविच्छिन्न ही बना रहता है।

मनुष्य जीवन की तरह साहित्य में भी वैचित्र्य होता है

साहित्य का स्वरूप सदा परिवर्तित होता रहता है। भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न आदर्शों की सृष्टि होती है। मनुष्य जीवन में हम जो वैचित्र्य और जटिलता देखते हैं, वही साहित्य में पाते हैं। साहित्य की गति सदैव उन्नति ही के पथ पर नहीं अग्रसर होती। मनुष्य समाज के साथ-साथ उसका भी उत्थान-पतन होता रहता है, परंतु इसका मतलब यह नहीं कि जब कोई जाति अवनत दशा में है, तब उसका साहित्य भी अनुन्नत हो। प्रायः देखा भी जाता है कि जाति के अधःपतित होने पर उसमें श्रेष्ठ साहित्य की सृष्टि होती है और जब जाति गौरव के उच्च शिखर पर पहुंच जाती है, तब उसका साहित्य श्रीहत हो जाता है। किसी-किसी का शायद यह ख्याल है कि जब देश में शांति विराजमान होती है, तभी साहित्य का निर्माण होता है। पर साहित्य के इतिहास में हम देखते हैं कि युद्ध-काल में भी जब एक जाति वैभव की आकांक्षा से उद्दीप्त होकर नर-शोणित के लिए लोलुप हो जाती है, तब उसमें दैवी शक्ति संपन्न कवि जन्म ग्रहण करता है।

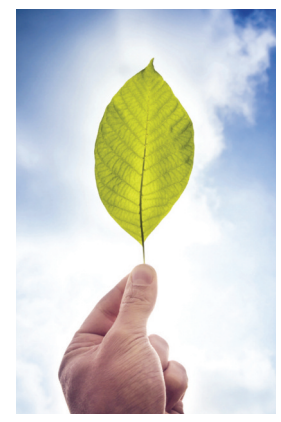

सच तो यह है कि जब कोई जाति वैभव-संपन्न हो जाता है, तब उसके साहित्य का ह्रास होने लगता है। जब तक देश उन्नतिशील है, तब तक उसमें साहित्य की उन्नति होती रहती है।

अब प्रश्न यह होता है कि साहित्य के उद्भव का कारण क्या है? क्या कवि की उत्पत्ति आकाश में विद्युत की भांति एक आकस्मिक घटना है? क्या देश और समाज के प्रतिकूल साहित्य की सृष्टि होती है? क्या कवि देश और काल की उपेक्षा नहीं करता? अथवा क्या देश और काल के अनुसार ही साहित्य की रचना होती है? इसमें संदेश नहीं कि साहित्य में वैचित्र्य है। परंतु वैचित्र्य में भी साम्य है। नदी का स्रोत चाहे पर्वत पर बहे, चाहे समतल भूमि पर, उसकी धारा विच्छिन्न नहीं होती। साहित्य का स्रोत भी भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण करके अविच्छिन्न ही बना रहता है। उदाहरण के लिए, हम हिंदी साहित्य ही की विचारधारा पर एक बार ध्यान देते हैं। महाकवि चंद से लेकर आज तक जितने कवि हुए हैं, सभी ने एक ही आदर्श का अनुसरण नहीं किया है। हम कह सकते हैं कि साहित्य का मुख्य विचार स्रोत समाज का अनुगमण कर सकता है, परंतु समाज की हीनता पर साहित्य की हीनता नहीं अवलंबित है।

सच तो यह है कि जब कोई जाति वैभव-संपन्न हो जाता है, तब उसके साहित्य का ह्रास होने लगता है। जान पड़ता है, पार्थिव वैभव से कविता-कला का कम संबंध है। जब तक देश उन्नतिशील है, तब तक उसमें साहित्य की उन्नति होती रहती है। जब वह अवनतिशील है, तब साहित्य की गति बदल जाती है। परंतु उसका वेग कम नहीं होता। वैभव की उन्नति से जब किसी जाति में स्थिरता आ जाती है, तभी साहित्य की अवनति होती है। यह नियम पृथ्वी की सभी जातियों में, सभी कालों में सत्य है। ऐसा होता क्यों है?

कितने ही विद्वानों का विश्वास है कि जब मनुष्य प्रकृति के सौंदर्य विकास से मुग्ध हो जाता है, तब वह अपने मनोभावों को व्यक्त करने की चेष्टा करता है। सौंदर्य-लिप्सा से साहित्य की सृष्टि होती है और कला का विकास। परंतु इस सिद्धांत के विरुद्ध एक बात कही जा सकती है। जब मनुष्य सत्यता और ऐश्वर्य की चरम सीमा पर पहुंच जाता है, तब तो उसकी सौंदर्यानुभूति और सौंदर्योपभोग की शक्ति का ह्रास नहीं होता, उलटे उसकी वृद्धि होती है। तब ऐसी स्थिति में साहित्य और कला की खूब उन्नति होनी चाहिए। परंतु फल विपरीत होता है। जाति के ऐश्वर्य से साहित्य मलिन हो जाता है और कला श्रीहत।

एलधो पचिलाक्कदन

मंजिलें और भी हैं

ट्रैकिंग के दौरान मैंने बंजर जमीन का टुकड़ा देखा, तो उस पर काम करने की योजना बनाई। मैंने वहां फलों के बीज रोपे और पौधे उगाए। अंततः मैं इस बंजर जमीन को फलों और पौधों का उद्यान बनाने में सफल रहा। अब यहां बहुत से लोग घूमने आते हैं।

बंजर जमीन को बदल दिया फलों के उद्यान में

मैं केरल में कोट्टायम का रहने वाला हूं। मैंने एक सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज से पढ़ाई पूरी की और बतौर आर्किटेक्ट नौकरी करने लगा। इस बीच मुझे एक एनजीओ में साथ जुड़ने का मौका मिला, जहां सरकारी फॉरेस्ट सर्विस के लिए काम करना होता था। मुझे प्रकृति के बीच जाकर एक अलग एहसास होने लगा। ट्रैकिंग के दौरान मैंने एक जमीन देखी, जो मूलतः बंजर थी। मैंने उस बंजर जमीन पर काम करने की योजना बनाई और अपने एक दोस्त के साथ मिलकर उसे खरीद लिया। हमारी योजना थी-एक आत्मनिर्भर इको-सिस्टम के निर्माण की। चूंकि वहां फसल का उत्पादन मुश्किल था, इसलिए मैंने वहां फलों के बीज रोपे और पौधे उगाए। धीरे-धीरे मैं इस बंजर जमीन को फलों और पौधों का उद्यान बनाने में सफल रहा। अब यहां बहुत से लोग घूमने आते हैं। अनेक प्रजाति के सेब, संतरे, अंगूर, लीची, स्ट्रॉबेरी के फलदार पौधे इस हरे-भरे उद्यान को और खूबसूरत बनाते हैं।

(विभिन्न साक्षात्कारों पर आधारित)

जैविक विधि अपनाई

इसे विकसित करने के लिए मैंने रासायनिक खाद का प्रयोग नहीं किया। मेरा मानना है कि प्रकृति खुद में ही आत्मनिर्भर है। मानव जाति का काम सिर्फ बीज बोना है और मेरे हिसाब से हम सभी को प्रकृति चक्र के साथ छेड़छाड़ नहीं करनी चाहिए। मैं हर शाम पास की फलों के दुकान पर जाता हूं, और फलों के कचरे को लेकर यहां पेड़, पौधों के आसपास डाल देता हूं। इससे मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ जाती है।

पर्यटकों के लिए खुला है

मैंने इस जगह को पर्यटकों एवं कृषि विशेषज्ञों के लिए खुला छोड़ा हुआ है। यहां पर्यटक एक रात के लिए रुककर, इन पहाड़ों में ट्रैकिंग करने के अलावा हमारे यहां के फलों का स्वाद भी ले सकते हैं। स्वर्ग मेडु के निर्माण के पीछे कोई आर्थिक लाभ का उद्देश्य नहीं था। मुझे प्रकृति के पास, एक शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करना था और यही मैंने किया।

स्वर्ग मेडु पर निर्भर

मेरी इतनी आय हो जाती है, जिससे मेरे परिवार का काम चल जाता है और इन पेड़ों की देखभाल भी हो जाती है। मेरे खानपान में फलों की अधिकता होती है, जो 'स्वर्ग मेडु' से आते हैं। बीते तीन-चार वर्षों से मैं वही खा रहा हूं, जो प्रकृति मुझे देती है। इन फलों से मुझे पर्याप्त पोषण मिल चुका है। मेरी पत्नी और बच्चों ने भी इसी जीवन-शैली को अपना लिया है।

आंकड़े

यूएन शांति अभियानों में योगदानकर्ता

संयुक्त राष्ट्र (यूएन) द्वारा चलाए जाने वाले शांति अभियानों में असंगठित कर्मी, पुलिस कर्मचारी, मिशन विशेषज्ञ, स्टाफ अफसर और ट्रूप्स शामिल रहते हैं। 31 मार्च, 2021 तक विभिन्न देशों में चल रहे शांति मिशन में योगदान के मामले में बांग्लादेश शीर्ष पर है।

इथियोपिया	6,245
बांग्लादेश	6,608
नेपाल	5,674
रवांडा	6,335
भारत	5,528

स्रोत- संयुक्त राष्ट्र

महोत्कट ने कहा, साधु-संतों और ऋषियों का यह कर्तव्य होता है कि वे अधर्म और अन्याय को सहन न करें। राक्षसों का संहार धर्म का ही पालन है।

ऋषि का तेज

अंतर्यात्रा
शिवकुमार गोयल

महर्षि कश्यप धर्मशास्त्रों के अध्ययन में लगे रहते थे। वह अपने शिष्यों को उपदेश दिया करते थे कि धर्म का स्वयं पालन करना चाहिए। यदि कोई धर्म के विरुद्ध किसी का उत्पीड़न करता है, तो उस दुष्ट से उसकी रक्षा के लिए तत्पर रहना चाहिए। अन्याय सहन करना घोर पाप है। एक दिन महर्षि कश्यप के पुत्र महोत्कट काशी नरेश के पुत्र का विवाह संपन्न कराने जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने धूम्राक्ष राक्षस को एक दिव्य शस्त्र के साथ देखा। धूम्राक्ष ने काशी क्षेत्र में आतंक फैला रखा था। ऋषि महोत्कट को पिता का उपदेश याद आ गया। उन्होंने धूम्राक्ष को चुनौती दे डाली तथा देव द्वारा दिए गए शस्त्र छीनकर उसका वध कर डाला। पता चलते ही धूम्राक्ष के पुत्र जघन और मनु ने महोत्कट ऋषि को काशी नरेश के महल में पहुंचकर घेर लिया। ऋषि ने अपने तेज से इन राक्षसों का भी वध कर डाला। काशी के एक विद्वान पंडित ने ऋषि से कहा, आपको धूम्राक्ष से बैर लेने की क्या आवश्यकता थी? महोत्कट ने कहा, साधु-संतों और ऋषियों का यह कर्तव्य भी होता है कि वे अधर्म और अन्याय को मूक बने रहकर सहन न करें। मैंने राक्षसों का संहार कर धर्म का ही पालन किया है। काशी नरेश के पुत्र का विवाह कराकर वह आश्रम लौट गए।

(अमर उजाला आर्काइव से)

शिलालेख

लिपट गई जो धूल पांव से
वह गोरी है इसी गांव की
जिसे उठाया नहीं किसी ने
इस कुठांव से।
ऐसे जैसे किरण
ओस के मोती छू ले
तुम मुझको चुंबन से छू लो
मैं रसमय हो जाऊं।

- केदारनाथ अग्रवाल

कोविड 2.0 में गांधी होते, तो क्या करते

स्पेनिश फ्लू से बड़े बेटे हरिलाल की पत्नी गुलाब और उनके बेटे की मृत्यु ने गांधी को भीतर तक आहत किया था।

दुष्यंत

महामारी

पिछली सदी में मोहनदास करमचंद गांधी से अधिक प्रभावित करने वाला दूसरा व्यक्तित्व शायद ही कोई विश्व के इतिहास में दर्ज हुआ हो। महात्मा गांधी ने भी अपने जीवनकाल में महामारी को देखा था, तो प्रश्न वाजिब है कि कोरोना महामारी की जिस प्रलंयकारी दूसरी लहर से भारत गुजर रहा है, अगर वह होते तो उनका नजरिया क्या होता? पिछली सदी को इतिहास में गांधी की सदी ही कहा गया, यह सवाल ऐतिहासिक महत्व का न भी हो, पर तार्किक तो यकीनन है ही!

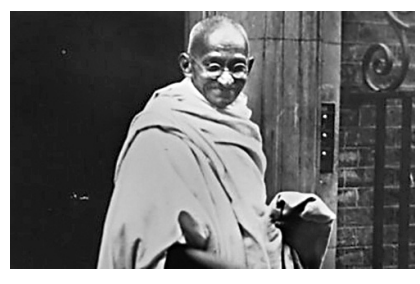

भारतीय इतिहास और संस्कृति की सुदीर्घ परंपरा में विचारकों की लंबी फेहरिस्त है, पर गांधी के बाद शायद राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक वैचारिकी को इतने बहुआयामी स्तर पर, इतना गहरे तक प्रभावित करने वाला दूसरा विचारक नहीं ही दिखता है। इस लिहाज से गांधी की टाइम मशीनी, काल्पनिक उपस्थिति और उससे जुड़ी फेंटेसी की यह दुनिया किसी के लिए दिलचस्प हो सकती है, तो किसी-किसी के लिए खीज भरी भी।

महामारी से उनका पहला परिचय दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान हो गया था। फिर वह 1915 में भारत आ गए। एक अनुमान के अनुसार, 1918-19 की इन्फ्लूएंजा की महामारी में लगभग दो करोड़ यानी विभाजन के दंगों से 40 गुना ज्यादा मौतें हुई थीं। इससे हुई अपने बड़े बेटे हरिलाल गांधी की पत्नी गुलाब और उनके बेटे की मृत्यु ने गांधी को भीतर तक आहत किया था। पर ऐतिहासिक स्रोत बताते हैं कि वह इस महामारी को बहुत तवज्जो नहीं दे रहे थे, इसकी एक वजह तो खुद उनकी गिरती सेहत भी होगी। स्पेनिश फ्लू पर सबसे प्रामाणिक किताब *पेल राइडरः द स्पेनिश फ्लू ऑफ 1918* लिखने वाली लौरा स्पिनी मानती हैं कि गांधी को भी स्पेनिश फ्लू हुआ था। यहां तक कि साबरमती आश्रम के अनेक लोग इससे पीड़ित हुए थे, उनके प्रिय मित्र सीएफ एन्ड्रयूज को भी हुआ था, और विडंबना यह भी थी कि महात्मा उन सबके लिए कुछ नहीं कर पाए थे। जूडिथ एम ब्राउन के अनुसार, इसी कारण 1918 के उत्तरार्ध में भारतीय राजनीतिक पटल पर वे लगभग अदृश्य ही लगते हैं। इतना जरूर है कि गांधी के जीवन से जुड़ी, उनकी अपनी लिखी किताबों में इस महामारी के दिनों के बेहद छिटपुट उल्लेख हमें मिल ही जाते हैं। पर सवाल तो यह है कि *वैष्णव जन तो तेने कहिए* के महागायक गांधी 21वीं सदी में होते तो क्या करते? पराई पीड़ को जानकर क्या व्यवहार करते? मुझे लगता है कि गांधी दर्शन के आंशिक अध्ययन से भी यह कहा जा सकता है कि वह मोदी सरकार का खुला विरोध नहीं करते, ठीक वैसे ही, जैसे उन्होंने विश्व युद्ध में अंग्रेजों का यह कहकर नहीं किया था कि यह अनैतिक होगा। शायद यही नैतिक प्रश्न और समाधान उनके सामने आज भी होता। पर इसके साथ मुझे यह भी लगता है कि वे हाथ पर हाथ धर कर नहीं बैठे होते, नोआखाली की तरह कोरोना से ज्यादा प्रभावित इलाकों में होते।

यह भी संभव था कि सरकार को वह ऐसे पत्र लिखते, जिसमें सरकार की नीतियों, विफलताओं की कड़क आलोचना या डांट होती और सुझाव होते, पर ऐसे पत्रों को संकटकाल के गुजर जाने तक गोपनीय रखने की शर्त भी वह लगाते।

विनम्रतापूर्वक सवाल तो यह भी उठाया जा सकता है कि क्या वह आपदा को अवसर कहते? क्योंकि हम जानते ही हैं कि शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, यंत्रीकरण को लेकर वे बहुत समर्थक तो नहीं थे, तो इस संकट को अपने ग्राम स्वराज के पुनरुत्थान का अवसर भले ही मान सकते थे।

इस संभावना से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि आज गांधी होते, तो कहीं साबरमती या वर्धा के आश्रम में बैठे हुए फोन या ट्वीट करते हुए खुद के लिए या अपने परिवारजन के लिए किसी अस्पताल में ऑक्सीजन बेड, वेंटिलेटर, आईसीयू, रेमडेसिविर जुटा रहे होते, या वैक्सीन की दूसरी डोज के लिए संघर्ष कर रहे होते या अपने परिजन का शव लेकर श्मशान में प्रतीक्षारत होते। ऐसी तमाम कोशिशों में जुटे भारतीयों में ही हम गांधी को देखें, या कम से कम उनका अंतिम जन तो मान ही लें, जिस तक स्वराज पहुंचना अभी सपना ही है।

- लेखक फिल्म प्रोफेशनल और स्वतंत्र इतिहासकार हैं